ISBN 81 86842-45-4

सस्करण प्रथम 1999

प्रकाशन कलासन प्रकाशन
मॉडर्न मार्केट, बीकानेर (राज)

लेजर प्रिट श्री करणी कम्प्यूटर एण्ड प्रिन्टर्स
गगाशहर बीकानेर (राज)

मुद्रक कल्याणी प्रिन्टर्स
माल गोदाम रोड बीकानेर

मूल्य 110/- रुपये

Nakhatron Ke Phere

(EPIC) by Mahopadhaya Manakchand Rampuria
Page 120 Price 110/

समर्पण -

सृष्टि सकल परिचालित जिससे-
ज्योतित 'सौर जगत' है,
ग्रह-नक्षत्र-दिवाकर जिसके-
सम्मुख प्रतिपल नत है।

उसके पावन पाद-पद्म पर-
सब कुछ अर्पित करता,
'नक्षत्रों के फेरे लो अब-
तुम्हें समर्पित करता।।

माणकचन्द रामपुरिया

दो शब्द

दिन जगता है। मन दैनदिन के कार्य–कलापो मे सलग्न हो जाता है। एकाएक कुछ व्यवधान आते है। कुछ दुर्घटनाएँ घट जाती है। शान्त सरोवर मे तरगे उठने लगती है। व्यथित हृदय से उसका समाधान ढूँढते है और तब मन कहता है– ये नक्षत्रो के फेरे है।

यथार्थत नक्षत्रो के फेरो के बडे परिणाम होते है। खुली ऑखो से उन्हे हम न देख सके यह और बात है। किन्तु उनके फेरो को हम नकार नहीं सकते।

मानव–मस्तिष्क बहुत दिनो से इस ओर सचेष्ट है किन्तु अभी तक सम्पूर्णता का दावा नहीं किया जा सकता। जो भी थोडा–बहुत अध्ययन प्रत्यक्ष हुआ है उसे पर्याप्त तो नहीं कामचलाऊ भर कहा जा सकता है।

ब्रह्माण्ड की सम्पूर्ण रचना इतनी विराट और अनन्त है कि वहॉ तक मानव की सीमित बुद्धि अभी तक पहुँच नहीं सकी है। हमारे अपने विश्व मे अनेकानेक ग्रह है। वहॉ तक पहुँचने की चेष्टा की जा रही है। कुछेक की दूरी तय भी की गयी है। किन्तु अन्य विश्वो मे हमारा पहुँचना सम्भव भी हो सकेगा– यह कहा नही जा सकता।

जिस सूर्य को हम देखते है वह हमारी पृथ्वी से लगभग एक सौ दस गुना बडा है। और यह कई करोड मील दूर है। इसका तापमान एक लाख फारनहाइट से भी अधिक है। यह सूर्य भी एक तारा है। महाशून्य मे ऐसे अनेको हैं। किन्तु हमारा सूर्य उन सभी तारो के व्यास से आकार मे सबसे छोटा है। किन्तु हमारे ज्योतिषियो ने अभी तक अपने अध्ययन के क्षेत्र मे इसी 'सौर–जगत को रखा है।

हमारे दृश्यमान सूर्य जैसे अनेक सूर्य अन्तरिक्ष मे है। भारतीय पुराणो मे द्वादश आदित्यो की कल्पना की गयी है। किन्तु समस्त ब्रह्माण्ड मे कितने सूर्य होगे– अनुमान लगाना कठिन है।

हमे यत्किचित ज्ञान उसी विश्व के सबध मे है जिस पर हम निवास करते हैं। यह पृथ्वी एक ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत है। इसके परिवेश मे न केवल सम्पूर्ण पृथ्वी तथा समुद्र की ही गणना की जाती है अपितु आकाश का वह भाग भी आ जाता है जिसमे सूर्य चन्द्रादि–ग्रह–नक्षत्र दिखाई देते हैं।

सूर्य तथा उसके परिवार को 'सौर–जगत कहा जाता है। इसमे पृथ्वी चन्द्रमा ग्रह नक्षत्र आदि सम्मिलित हैं। इस जगत का मध्य अर्थात् केन्द्र सूर्य है।

आकाश मण्डल मे चमकने वाले ज्योतिष–पिण्डो को 'तारा' कहा जाता है। ये तीन प्रकार के होते हैं। एक स्थिर दूसरे सचरणशील और तीसरे धूमकेतु।

स्थिर तारे पृथ्वी एव अन्य तारो से एक निश्चित दूरी पर यथास्थान बने रहते है। स्थिर तारो मे स्वय अपनी कान्ति होती है जिससे वे चमकते हैं। ये पृथ्वी से अधिक दूर होने के कारण छोटे और कम चमकीले दिखाई देते है। किन्तु यथार्थत ये बहुत बडे और अधिक चमकीले है।

सचरणशील तारो को ग्रह कहा जाता है।

धूमकेतु उन तारो के समूह को कहते हैं जो यदा–कदा कुछ समय के लिए दिखाई देते हैं।

सचरणशील तारे अर्थात् ग्रह निरन्तर सूर्य की परिक्रमा करते है। इनका स्थान बराबर बदलता रहता है। इनमे स्वय का प्रकाश नहीं होता। ये सूर्य की ज्योति से चमकते है।

शून्य को ही आकाश कहा जाता है। हमारे आकाश का विस्तार अकल्पनीय है। यह इतना विशाल और विराट है कि अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता। पृथ्वी सूर्य ग्रह नक्षत्र आदि सभी पिण्ड इसी निराधार आकाश मे रहते हैं और सचरण करते है। ये सब किस पारस्परिक आकर्षण या अन्य प्रक्रिया से स्थित–अवस्थित हैं यह सही–सही नहीं कहा जा सकता। इसके अतिरिक्त वायु, बादल तथा विभिन्न प्रकार के गैस भी आकाश मे पाये जाते हैं। ये कहाँ से आते और कहाँ जाते हैं इसका भी मानव–मस्तिष्क को पूरा ज्ञान नहीं है।

ग्रहो के अतिरिक्त आकाश–मण्डल मे अनेक तारा–समूहो द्वारा जो अनेक तरह की आकृतियाँ बनती हैं उन आकृतियो अथवा तारा–समूहो को ही नक्षत्र कहा जाता है। जिस प्रकार पृथ्वी पर फर्लांग मील किलोमीटर से दूरी नापते हैं उसी प्रकार आकाश–मण्डल की दूरी नक्षत्रो द्वारा नापी जाती है। सम्पूर्ण आकाश–मण्डल को सताइस नक्षत्रो मे विभाजित किया गया है। उनके नाम उसमे स्थित तारा समूह की आकृति के आधार पर रखे गए हैं। ये हैं १. अश्विनी २ भरणी ३ कृत्तिका ४ रोहिणी ५ मृगशिरा ६ आर्द्रा ७ पुनर्वसु, ८ पुष्य ९ अश्लेषा १० मघा ११ पूर्वा फाल्गुनी १२ उत्तरा फाल्गुनी १३ हस्त १४ चित्रा १५ स्वाति १६ विशाखा १७ अनुराधा १८ ज्येष्ठा १९ मूल २० पूर्वाषाढ २१. उत्तराषाढ २२ श्रवण २३ घनिष्ठा २४ शतभिषा २५ पूर्वाभाद्रपदा २६ उत्तराभाद्रपदा २७ रेवती।

नक्षत्रो के सम्बन्ध मे यह उल्लेखनीय है कि जब चन्द्रमा सूर्य से १३$\frac{१}{४}$ अश की दूरी पर पहुँचता है तब एक नक्षत्र होता है। प्रत्येक नक्षत्र को चार भागो मे बॉटा जाता है। नक्षत्र के प्रत्येक भाग का चरण कहते हैं– प्रथम चरण द्वितीय चरण तृतीय चरण और चतुर्थ चरण। इस प्रकार सताइस नक्षत्रो के १०८ भाग होते है। और इसी प्रकार क्रमश नौ नक्षत्र चरणो की एक–एक राशि होती है। इस प्रकार सताइस नक्षत्रो से मिलकर बारह राशियॉ बनती है। ये है– १ मेष २ वृष ३ मिथुन ४ कर्क ५ सिह ६ कन्या ७ तुला ८ वृश्चिक ६ धनु १० मकर ११ कुम्भ तथा १२ मीन।

यहॉ पर यह भी कहना अप्रासगिक न होगा कि विभिन्न नक्षत्रो के चरणाक्षरो के आधार पर पर किस राशि म क्रमश कान–कौन से अक्षर होते है वे ध्यान देने योग्य है–

मेष– चू चे चो ला ली लू ले लो आ
वृष– ई उ ए ओ वा वी वू वे वो
मिथुन– का की कू घ ङ छ के को हा
कर्क– ही हू हे हो डा डी डू डे डो
सिह– मा मी मू मे मो टा टी टू टे
कन्या– टो पा पी पू ष ण ठ पे पो
तुला– रा री रु रे रो ता ती तू ते
वृश्चिक– तो ना नी नू ने नो या यी यू
धनु– ये यो भा भी भू धा फा ढा भे
मकर– भो जा जी खी खू खे खो गा गी
कुम्भ– गू गे गो सा सी सू से सो दा
मीन– दी दू थ झ ञ दे दो चा ची

विभिन्न राशियो के अपने स्वभाव आकृति तथा गुण–धर्म होते हैं। जिनकी जो राशि रहती है उनके साथ वे ही गुण–स्वभाव सम्पृक्त होते है। तत्सबधी विवरण निम्नलिखित है–

१ मेष– इस राशि का स्वरूप भेडा जैसा है। यह रजोगुणी है। रक्त–वर्ण उष्ण प्रकृति यह अति शब्दकारी तथा अल्प सतति वाली राशि है। इसका प्रभुत्व मस्तक पर है। इसका स्वामी मगल है।

२ वृष– इसका स्वरूप बैल जैसा है। यह सौम्य स्वभाव स्वच्छन्द विचरण करने वाली राशि है। इसका प्रभुत्व मुख पर है। इसका स्वामी शुक्र है।

३ मिथुन– इसका स्वरूप हाथ मे गदा लिए पुरुष तथा साथ मे वीणा बजाती हुई स्त्री जैसा है। यह स्निग्ध कान्तिवाली कलाप्रिय है। इसका

प्रभुत्व कण्ठ तथा बाहु पर है। इसका स्वामी बुध है।

४ कर्क– इसका स्वरूप केकडा जैसा है। यह जल–विहारणी सौम्य स्वभाव वाली है। यह गुलाबी वर्ण की है। इसका प्रभुत्व वक्षस्थल पर है। इसका स्वामी चन्द्रमा है।

५ सिह– इस राशि का स्वरूप सिह जैसा है। यह निर्भीक व पर्वतविहारिणी है। यह दीर्घ आकार की है। इसका प्रभुत्व हृदय पर है। इसका स्वामी सूर्य है।

६ कन्या– इसका स्वरूप हाथ मे धान तथा अग्नि लेकर नाव मे बैठी कुँवारी कन्या जैसा है। यह मदिर आदि शुभ स्थानो पर विहार करने वाली है। इसका प्रभुत्व उदर पर है। इसका स्वामी बुध है।

७ तुला– इसका स्वरूप तराजू जैसा है। यह वन–विहारिणी उग्र स्वभाव की है। उष्ण प्रकृति की है। इसका प्रभुत्व कटि–प्रदेश पर रहता है। इसका स्वामी शुक्र है।

८ वृश्चिक– इसका स्वरूप बिच्छू जैसा है। यह जल–विहारिणी उग्र स्वभाव की है। यह दीर्घ आकार और स्निग्ध–कान्ति की है। इसका प्रभुत्व गुप्ताग पर है। इसका स्वामी मगल है।

६ धनु– इसका स्वरूप आदि मे दो और अन्त मे चार पॉव वाले ऐसे धनुर्धारी का है जिसके शरीर का ऊपरी आधा भाग मनुष्य जैसा तथा नीचे का पशु जैसा है। यह अग्नि तत्त्व है। इसका प्रभुत्व जघा पर है। इसका स्वामी गुरू है।

१० मकर– इसका स्वरूप मकर जैसा है। यह सौम्य स्वभाव वनविहारिणी है। यह पीत वर्ण तथा दृढ रहने वाली है। इसका प्रभुत्व घुटनो पर है। इसका स्वामी शनि है।

११ कुम्भ– इसका स्वरूप घडा लिए हुए मनुष्य जैसा है। यह उग्र स्वभाव की है। इसका स्वरूप पिण्डलियो पर है। इसका स्वामी शनि है।

१२ मीन– इसका स्वरूप ऐसी दो मछलियो जैसा है जिनकी पूँछ तथा मुँह मिले हुए है। यह सौम्य स्वभाव की तथा धूम्रवर्ण की है। इसका प्रभुत्व पाँवो पर है। इसका स्वामी गुरू है।

यह ज्ञातव्य है कि जिस राशि का तथा उसके स्वामी का जो स्वभाव होता है वही सामान्यत जातक पर परिलक्षित होते है। साथ ही प्राणियो के जिस अग पर राशि का प्रभुत्व रहता है जातक के उसी अग पर ये राशियॉ अपना अच्छा अथवा बुरा प्रभाव डालती है।

पृथ्वीवासी प्राणियो के जीवन पर ग्रहो नक्षत्रो तथा राशियो का विशेष महत्त्व है। इनके स्पष्ट प्रभाव जातक पर देखे जाते हैं। हमारे

ज्योतिषियो ने जितना भी अध्ययन किया है वह पर्याप्त गहराई तक पहुँच सके है।

ज्योतिष–विद्या के वेदो का अग कहा गया है। इसका क्रमबद्ध अध्ययन आर्यभटट प्रथम के समय से माना जाता है। इनका काल ४६६ ई माना गया है। ज्योतिष के सबध इनका आर्यभटटीय प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसके बाल कालकाचार्य तथा आर्यभटट द्वितीय ने इस दिशा मे कार्य किया। इनके बाद ललाचार्य तथा वाराहमिहिर हुए। आज भी भारतीय ज्योतिष की ओर विद्वानो का ध्यान लगा है। इस दिशा मे निरतर अध्ययन किए जा रहे है। फिर भी विश्व–ब्रह्माण्ड इतना विशद और विराट है कि वहाँ सर्वाशत मनुष्य के सीमित मस्तिष्क की पहुँच नहीं हो सकती। यही कारण है कि जिसने भी इस दिशा मे अध्ययन की गहनता प्राप्त की है उसने अन्त मे यही कह कर सतोष किया है कि ईश्वर की लीला अपरम्पार है।

एक बात और–

ज्योषित का विषय काव्य का विषय नही हो सकता। हॉ प्राचीनकाल के आचार्यो ने ज्योतिष आयुर्वेद योगादि के ग्रथो की भी काव्य मे रचना की है। फलत ये अधिकाधिक दुरूह होते गए है। काव्य म जिस सरल–सुबोध और प्रवाहमयी शैली की अपेक्षा है उसका निर्वाह ज्यातिषीय आकडा गणितीय अका से सम्भव नही है।

मैने भी इस ग्रथ की रचना ज्यातिषीय ज्ञान–वर्द्धन की दृष्टि से नहीं की है। किन्तु ज्योतिष के जो आधारभूत तत्व है वे इतने अपरिमित और विराट है कि वहॉ तक बुद्धि की पहुँच नही हो सकती। अत जगन्नियता की अपरम्पार लीला–वर्णन के उद्देश्य से ही प्रस्तुत ग्रथ का प्रणयन किया गया है। इस पुस्तक मे ज्योतिषीय तत्त्वो को सक्षेप मे काव्य के परिधान प्रदान किये गए है।

मैने चेष्टा की है कि इस पुस्तक मे ज्योतिषीय आधार मनोरजक रूप मे समाविष्ट हो जाये।

यदि मेरे पाठको को यह थोडा भी आह्लादकर सिद्ध हुआ तो मै अपना परिश्रम सफल समझूँगा।

अस्तु–

रामपुरिया भवन
रामपुरिया मार्ग बीकानेर

माणकचन्द रामपुरिया

प्रथम

ज्ञात नहीं यह सृष्टि कहाँ से-
कैसे है अभिव्यक्त हुई?
कैसे इतने शिला खण्ड औ'-
सागर-सरिता व्यक्त हुई?

खोज रहे हैं लोग अहर्निश-
जीवन की आरम्भ कथा?
कैसे जड़ में जगी चेतना-
कैसे उदभव हुई व्यथा?

ज्ञान जहाँ तक जग पाता है-
थाह नहीं मिल पाती है,
बुद्धि डूब कर गहराई में-
और अधिक भरमाती है।

आदि अन्त तो व्यक्त वस्तु के-
यहाँ सहज मिल जाते हैं,
जो भी दृश्य जगत हैं ये तो-
सदा न रहने पाते हैं।

जन्म हुआ है जिसका वह तो-
एक दिवस मिट जायेगा,
जितने भी हैं तत्त्व उन्हीं में-
अपना आश्रय पायेगा।

दृश्य-पटल है फैला भू पर-
चित्र अनेकों रचे गए,
भिन्न-भिन्न आकृतियाँ सब की-
रूप सभी के नए-नए।

एक दूसरे से इन सब का-
मेल नहीं हो पाता है,
समय-काल के साथ जगत ही-
अपना रूप दिखाता है।

महासृष्टि की रचना में है-
सब का अपना भाव नया,
झाँक रहा है सब जीवों में-
अपना अलग स्वभाव नया।

कहीं किसी से मेल न मिलता-
सब हैं सब से अलग-अलग,
एक नीड़ में रहने वाले-
अलग-अलग हैं विहग-विहग।

अलग-अलग है ढग सभी के-
अलग-अलग है रग यहाँ,
अलग-अलग अपनों की बस्ती-
अलग-अलग है सग यहाँ।

यही एकता की विभिन्नता-
सब की है पहचान यहाँ,
किन्तु सत्य है, नहीं किसी को-
अपना भी है ज्ञान यहाँ।

जाने कौन यहाँ निर्माता-
कैसे निर्मित होती है,
एक किरण है जाग रही तो-
कहीं दूसरी सोती है।

सत्य विभा है किन्तु यहाँ पर-
पहले छाया अन्धकार,
पिघली तम की जब चट्टानें-
निकली ज्योतित किरण-धार।

लेकिन कैसे? बात यही तो-
लगती सब से गूढ़ यहाँ,
इसे जानने के प्रयास में-
ज्ञानी भी हैं मूढ़ यहाँ।

यह रहस्य है कोई जग में-
अब तक जान न पाया है,
इसे जानने की खातिर ही-
ज्ञान सदा भरमाया है।

निखिल सृष्टि-ब्रह्माण्ड-परिधि में-
नहीं किसी का अन्त यहाँ,
फिर-फिर आता पतझड़ फिर-फिर-
खिलता सदा वसन्त यहाँ।

सूक्ष्म कणों की सहज कल्पना-
कभी नहीं की जाती है,
और यहीं पर छवि विराट की-
देख दृष्टि घबड़ाती है।

रगों में भी एक दूसरे-
से मिलता है रूप नहीं,
सभी जगह तो दिख जाये, है-
ऐसा एक स्वरूप नहीं।

जिह्वा एक, किन्तु सभी की-
भिन्न यहाँ पर वाणी है,
जड़-चेतन की इस जगती में-
अपनी अलग कहानी है।

जिसने भी है सृष्टि बनायी-
उसको विनय-प्रणाम सदा,
हृदय-पटल पर रहे सुशोभित-
उसका रूप ललाम सदा।

वही शक्ति देगा तो मन में-
ज्योति सुभग जग जायेगी,
उसके स्वस्ति वचन से मन में-
नयी किरण मुस्कायेगी।।

द्वितीय

एक शक्ति है अतुल कि जिसकी-
धार अहर्निश चलती,
चेतन और अचेतन सब में-
उसकी विभा विहँसती।

जहाँ कहीं जो अग्नि सुलगती-
शिखा शक्ति की दिखती,
वही शक्ति बन नीर-जलद में-
अम्बर से है झरती।

वही शक्ति कण-कण में बनकर-
रूप नयन में आती,
वही करूण क्रन्दन में आँसू-
बनकर ढुलती जाती।

दृश्य-अदृश्य जहाँ जो दिखता-
वही शक्ति लहराती,
उसे छोड़कर और दूसरी-
धार न भू पर आती।

वही पवन बनकर बागों में-
नव-नव, फूल खिलाती,
डाल-डाल औ पात-पात में-
सिहरन नयी जगाती।

वही शक्ति जल बनकर निर्झर-
से नित झरती झर-झर,
सागर की उत्ताल तरगे-
बनकर छूती अम्बर।

वही शक्ति भूतल की माटी-
स्वर्ण उगलने वाली,
वह खेतों में लहराती है-
बनकर शोभाशाली।

पावक बनकर वही शक्ति तो-
सदा धधकती रहती,
वन में दावानल औ' नर में-
जठरानल बन दहती।

वही शून्य आकाश बनी है-
सब कुछ जहाँ समाहित,
उसकी आभा से अग जग तक-
रहता सदा समादृत।

जिसको जो भी यश मिलता है-
उसी शक्ति के कारण,
उसी शक्ति से शब्द-वर्ण का-
होता है उच्चारण।

फूलों की शोभा में निखरी-
उसी शक्ति की लाली,
वही शक्ति है गहन तिमिर में-
ज्योति जगानेवाली।

झंझा के झोंकों पर चढ़ कर-
वही शक्ति मुस्काती,
उसी शक्ति की गूँज, सृजन के-
क्षण अतुलित बन जाती।

गंध-सुगंध अनामिल जितने-
उसी शक्ति के आश्रित,
उसी शक्ति पर सृष्टि समन्वित-
रहती है अवलंबित।

वही शक्ति है जिससे हम-
स्पर्श तत्त्व कर पाते,
नासा-पुट के रन्ध्र-रन्ध्र में-
सुख-सौभाग्य जगाते।

स्वाद उसी से जिह्वा लेती-
त्वचा पुष्ट हो जाती,
उसी शक्ति से बल धारण कर-
अस्थि कठिन बन पाती।

रुधिर वही है, तेज वही है-
जीवन की गतिमयता,
उसी शक्ति के बल पर रहती-
मन की सहज सबलता।

वही शक्ति है हर प्राणी में-
कण-कण में उद्भासित
उसी शक्ति की प्रभा अखण्डित-
दिग्-दिगन्त में भासित।

एक शक्ति है प्रबल कि जिसको-
जो जी चाहे कह लो,
यही शक्ति है हँसकर रोकर-
जैसे चाहो सहलो।

इसी शक्ति को नमन करें हम-
सादर शीश झुकाके,
सुख-सौभाग्य बढायें जग में-
अपना इसे बना के।।

तृतीय

शक्ति रूप परमेश्वर भू पर
कृपा तुम्हारी हरदम सब पर
तुम से ही है सब जड़ चेतन-
सकल सृष्टि में तेरा वन्दन।

जन-जन शीश नवा कर गाते-
तेरी जय के गीत सुनाते,
तुझ पर ही है अग जग आश्रित-
तुझ से ही सब महिमा-मंडित।

तुम ही हो अव्यक्त शक्ति-धर-
सकल शक्ति है तुझ पर निर्भर,
निखिल सृष्टि के तुम हो स्वामी-
तेरे ही हैं सब अनुगामी।

कोई कहता ईश्वर तुम हो-
गतिमय शोभा के कुमकुम हो,
कोई तुझको ब्रह्म बताते-
तुझको सादर शीश नवाते।

यह सम्पूर्ण चराचर भूतल-
तुम हो केवल कारण प्राजल,
और दूसरा तुम्हें छोड़ कर
रहा नहीं संबंध तोड़ कर।

भिन्न-भिन्न है रूप तुम्हारा-
सब ने ही है तुम्हें पुकारा,
तेरे कितने नाम पड़े हैं-
तुझ पर कितने नयन गड़े हैं।

तुमने ही तो ब्रह्मा बनकर-
सृष्टि रचाई है विश्म्भर,
जहाँ-कहीं भी जो भी दिखता-
तेरी ही तो गाथा लिखता।

तुम्ही विष्णु बन पालन करते-
शक्ति समन्वित जग में भरते,
कण-कण भू के रहते रक्षित-
सब रूपों में होकर वदित।

रुद्र रूप में तुम ही जग का-
नाश किया करते पग-पग का,
तुझ से कोई बचा नहीं है-
शेष वही जो रचा नहीं है।

एक तुम्हीं धर रूप अनेकों-
अखिल सृष्टि विद्रूप अनेकों,
तुझको कोई जान न पाता-
जो कहता, अनुमान लगाता।

तुमने ही ब्रह्माण्ड बनाया-
पूर्ण सृष्टि का रूप दिखाया,
लोक और परलोक समन्वित-
पृथ्वी औ आकाश विभासित।

अग्नि-वायु-जल निर्मिति तेरी-
सभी वस्तुएँ तेरी चेरी,
सूर्य चन्द्र औ तारे अनगिन-
काल-चक्र के सारे पल-छिन।

सब तुझसे उत्पन्न हुए हैं-
उद्‌भव कारक अन्त हुए हैं,
कितने हैं क्या जाने कोई-
सब की मति है थक कर सोई।

यह ब्रह्माण्ड अपार बड़ा है-
महाशून्य में स्वय खड़ा है,
अनुभव से भी आगे-आगे-
इसकी गति ने सब कुछ त्यागे।

विमल प्रकाश रश्मि जो चलती-
सुबह-शाम किरणों में ढलती,
इसकी गति की थाह नहीं है-
रुकता विभा-प्रवाह नहीं है।

कितने ऐसे भी हैं जिनकी-
ज्योति धरा पर रहती छिटकी,
उनकी किरण नहीं उतरी है
दूरी उनकी बहुत बड़ी है।

ग्रह नक्षत्र विभासित तारे-
चमक रहे हैं क्षितिज किनारे,
इनको कोई देख न पाते-
यत्रों से अनुमान लगाते।

उसकी महिमा से सब हारे-
पडित लगते मूढ विचारे,
कौन बताए सृष्टि कहाँ तक-
शून्य गगन है व्याप्त जहाँ तक।

जगत नियता तुम्हें नमन है-
तुझको अग-जग का वन्दन है,
तनिक शक्ति दो शीश उठा कर-
देखें तेरी छवि हम दृग भर।।

चतुर्थ

अक्षर है जो व्यक्त न होता-
वर्ण व्यक्त हो जाता
वर्णों से ही आराधन का-
तत्त्व मनुज है पाता।

जो व्यक्त है धर्म उसी का-
मानव ढूँढ रहा है,
लेकिन अपनी सीमाओं में-
मस्तिष्क मूढ रहा है।

प्रकृति विराट अतुल है इतनी-
थाह न कोई पाता,
गहरे डूब उतरने वाला-
और अधिक भरमाता।

यह ब्रह्माण्ड विशाल कि कोई-
इसे समग्र न जाना,
इसके कोई एक तत्त्व को-
भी किसने पहचाना?

इसमें कैसी वस्तु कहाँ है-
देख न कोई पाता,
कौन कहाँ से निकला औ फिर-
लीन कहाँ हो जाता?

उदय और फिर अस्त ज्योति का-
कैसे प्रतिदिन होता?
कौन कहाँ पर जाग रहा है-
कौन कहाँ पर सोता?

अभी एक सीमित सा ही जो-
तत्त्व देख दृग पाए,
इसके कण की भी विशालता-
कौन भला अपनाए।

कहते हैं कुछ लोग कि सूने-
में हैं लोक असख्यक
जाने कितने तत्त्व हुए औ -
कितने हुए परीक्षक।

किन्तु अभी तक नहीं किसी ने-
उनकी गणना की है
जिसने किया प्रयास उसी ने-
बातें बहुत कही है।

कितने हैं ब्रह्माण्ड शून्य में-
इसको कौन बताए,
है अनन्त आवेग सृष्टि का-
कौन किसे समझाए।

एक तनिक छोटा-सा जो-
ब्रह्माण्ड हमें है दिखता,
वह अनन्त रूपों का लेखा-
दृश्य-पटल पर लिखता।

फिर जो कुछ है उससे आगे-
उसको कौन बताए,
उस अदृश्य छोर की सीमा-
कौन भला छू पाए।

सुनते हैं इस महाशून्य में-
लोक अनन्त अवस्थित,
सबकी अपनी दशा-दिशा है-
सब हैं स्वयं व्यवस्थित।

सबल घूर्णि से सब संचालित-
सब में वेग प्रबल है,
नहीं किसी को एक पलक भर-
को भी मिलता कल है।

यहाँ नियति का नियम अखण्डित-
सब करते हैं पालन,
इसी नियम से महाकाल का-
होता पद प्रक्षालन।

छोटा यह ब्रह्माण्ड कि जिसमें-
विचर रहे हम प्राणी,
इससे कितने और विशद हैं-
जान न पाए ज्ञानी।

प्रकृति पुरुष के इस रहस्य को-
कोई खोल न पाए,
बुद्धि-ज्ञान के सारे कौशल-
रहते हैं भरमाए।

अंतिम तत्त्व यही मिलता है-
प्रभु की लीला केवल,
है विस्तार अपार अनावृत्त-
पच-तत्त्व भू मण्डल।

इसके कारण और करण के-
आगे हम सब नत हैं,
मिटनेवाले दृश्य जगत में-
एक शक्ति बस सत है।

उसी तत्त्व का करें हृदय से-
हम सब नित अभिनन्दन,
वर्ण नाम से अर्थ समुज्ज्वल-
गाएँ उसका वन्दन।।

पचम्

जय हो शक्ति सेमुन्नत-
शीश सभी हैं अवनत,
तेरी महिमा सम्मुख-
होते जन-जन अभिमुख।

कैसे भला बताए-
कौन कहाँ से आए,
अपना-अपना मत है-
क्या जाने क्या सत है?

पश्चिम के विज्ञानी-
गढ़ते नयी कहानी,
उनकी बड़ी निराली-
बातें होती खाली।

वे सब कहते, देखो-
वर्ष अरब को लेखो,*
महाशून्य में तम था-
निकला रवि अनुपम था।

एक सूर्य था चमका-
महाशून्य में दमका,
कालोपरान्त वहीं से-
कोई सूर्य कहीं से-

आया औ फिर भागा-
शून्य कक्ष को,
उससे हुआ विलोड़न-
संघर्षण-उत्पीड़न-

* पाश्चात्य मतानुसार कहा गया है कि लगभग तीन अरब वर्ष पूर्व महाशून्य में केवल एक ही सूर्य था।

दोनों रवि की टक्कर
चले शून्य में चक्कर,
ज्योति-पुज के टुकड़े-
बिखरे फिर सब सिकुड़े,

ग्रह-नक्षत्र वही हैं-
तारे और मही हैं,
महाशून्य में अविरल-
अनगिन ज्योतित शतदल,

लगे चमकने क्षण-क्षण-
हुए तत्त्व के सर्जन,
कालान्तर में उनके-
कक्ष बने चुन-चुन के,

स्वय चतुर्दिक रवि के-
लगे घूमने छवि के,
कक्ष उन्हीं का आया-
ज्योति पिण्ड लहराया,

इसी तरह सब शशि को-
कहते ज्योति कलश को,
कोई कहता रवि का-
टुकड़ा है भू-छवि का,

पर खगोल-ज्ञाता से-
पश्चिम-अभिजाता से,
खुला नहीं है अब तक-
प्रश्न रहेगा कब तक,

यह रहस्य है ऐसा-
कठिन न कुछ भी जैसा
आकस्मिक घटनाएँ-
गणना कौन बताए,

वे ही कारण बनकर-
रचते सब कुछ सत्वर,
विस्तृति जो है सम्भव-
उससे ही है उद्‌भव।

वे अकाट्य कब जानो-
परिवर्त्तन को मानो,
इसीलिए ये मिटते-
दूर तिमिर में छुटते,

नए-नए मत आते-
ज्ञान-ध्यान चकराते,
पश्चिम के जन कहते-
बुद्धि-योग में रहते,

किन्तु यहाँ ऋषि-मुनि ने-
योग-याग-जप-गुणि ने-
स्वय अहर्निश तप कर-
देखा सब कुछ जग कर,

दिव्य दृष्टि का ज्ञाता-
ही है सब कुछ पाता,
यहाँ अज्ञेय नहीं है-
सब कुछ स्वय सही है,

भेद नहीं है सम्मुख-
सत्य तत्त्व है अभिमुख,
ध्यान-योग से देखा-
सत्य रूप का लेखा,

सृष्टि-दृष्टि का कारण-
तत्त्व-सत्व अवधारण,
देख शक्ति अपरिमित-
ज्ञान-ब्रह्म अभिव्यजित,

नमन उसी का जन-जन-
गाते हैं सब प्रतिक्षण,
वहीं सभी जन आते-
सादर शीश नवाते।

हम भी करते वन्दन-
लेते पद-रज चन्दन,
सब कुछ उससे पाते-
हँसते मोद मनाते।

दुःख शमन सब करता-
शक्ति हृदय में भरता,
जय-जय गाते गाथा-
पद पर धरते माथा।।

षष्ठम्

इस धरती के कण-कण पर नित-
देव मनाते हर्ष,
सभी दृष्टि से सदा रहा है-
उन्नत भारतवर्ष।

तत्त्व ज्ञान से मंडित है यह–
ऋषि मुनियों का देश,
यहाँ सदा अध्यात्म ज्ञान का–
जाग्रत है परिवेश।

तम की गहन गुफा से बाहर–
निकली इसकी जोत,
इसका जीवन धर्म-भाव से–
रहता ओत-प्रोत।

कण-कण से ही दिव्य ज्ञान का–
छिटक रहा आलोक,
इस धरती के साथ सदा है–
जीवन में परलोक।

जन्म-मृत्यु के सब रहस्य का–
देखा हमने रूप
भरत-भूमि के कण-कण पर है–
प्रभु का दिव्य स्वरूप।

नियति स्वयं है शक्ति, किन्तु यह
कभी नहीं स्वच्छन्द,
इसकी गति के आगे-आगे–
कर्मों का है वन्द।

माना इसका सब जीवों पर-
पड़ता सदा प्रभाव,
किन्तु सदा कर्मों के कारण-
जागा नया स्वभाव।

कर्मों से बनती है संसृति-
जीवन का अभिलेख,
यह है इतना सूक्ष्म कि कोई-
पाता इसे न देख।

इसको ही कहते हैं भू पर-
अपना-अपना भाग्य,
सदा कर्म ही जग में जगकर-
बनता है सौभाग्य।

कोई कहता सब है निश्चित-
होनी ही है भाव्य,
सब है पहले से निर्धारित-
जीवन का सम्भाव्य।

इसमें होता कभी न नर से-
किसी तरह का फेर,
होनी होकर ही रहती है-
निश्चय देर-सवेर।

यदि यह सच है तो फिर नमन-
का कैसा उद्योग?
जो कुछ भी है प्राप्य उसी का-
करे सदा उपभोग।

धरकर हाथ-हाथ पर अपना-
करे न कुछ सचार,
होना है जो होगा फिर क्या-
जीवन का व्यापार।

लेकिन कुछ ज्ञानी-जन का मत-
इसके दृढ़ विपरीत,
उनका कहना है उद्यम से-
मिलती जग में जीत।

अपने भाग्य लेख को नर ही-
गढ़ने के है योग्य
मिटा वही सकता है अपने-
गर्हित भव का भोग्य।

वे कहते हैं मानव-जीवन-
गति का है वह केन्द्र,
जिसमें पक्ष-विपक्ष-नियति की-
किरणें सदा विकेन्द्र।

एक तरफ है तिमिर घना-
जो दानवता का तत्त्व,
और दूसरी तरफ उजाला-
समता का देवत्व।

जैसा कर्म करेगा मानव-
वैसा होगा प्राप्त,
अपने सद्कर्मों के आश्रित-
सब विचार है आप्त।

तप कर जिसने खरा बनाया-
अपना भव्य शरीर,
उसने ही बदली है अपनी-
बुद्धि-विमल-तकदीर।

सत्कर्मों के पथ पर चलकर-
जागी शक्ति अपार,
उषा-रश्मि जिससे जागी है
निखरा है ससार।।

सप्तम्

प्रभु की लीला अपरम्पार-
कितना विस्तृत है ससार?
कौन बताए इसका माप?
कितना शीतल कितना ताप?

ब्रह्म रूप जो अतुलित शक्ति-
जिस पर सब की है अनुरक्ति,
वही अखण्डित भू का सत्य-
वही सभी तत्त्वों का तथ्य।

ज्योति-पिण्ड जब हुआ विकीर्ण-
सूर्य-रश्मि से होकर शीर्ण,
नभ में तारे औ' नक्षत्र-
नभ में फैले सब सर्वत्र।

ग्रह-नक्षत्र बने उड्डीन-
सौर्य-ताप में होकर लीन,
लगे घूमने चारों ओर-
एक कक्ष की धर कर डोर।

कोई कहता सात्विक ज्ञान-
ब्रह्म रूप है सब परिधान,
रचनाकार की जागी चाह-
सृष्टि बनी यह अगम अथाह।

प्रभु की इच्छा का परिणाम-
घूर्णित है यह जग अविराम,
इसको सका न कोई टोक-
कोई सका न पथ पर रोक।

अविरल पथ पर है गतिमान-
ऋषि-मुनियों का है अनुमान,
देख रहे सब होकर दीन-
हुए न कोई यहाँ प्रवीण।

सीमित जीवन सीमित बुद्धि-
हुई न जब तक सात्विक शुद्धि,
कैसे पाये इसका ज्ञान-
तत्त्व-तत्त्व का क्या परिधान।

कहते सब जो सूना व्योम-
जिसमें अनगिन सूरज-सोम,
जहाँ सितारे-तारे-जोत-
ज्योति-पिण्ड के अनगिन स्रोत।

उनका नित चलता है चक्र-
गति उनकी है सीधी-वक्र,
फिर भी दिखता उनका भाव-
पड़ता भू पर प्रबल प्रभाव।

यही नियंत्रित करते योग-
लाते भूतल पर सयोग,
यों तो हैं ये भू से दूर-
शक्ति वहाँ पर है भरपूर।

जन्म-मरण की कारक धार-
कुशल-क्षेम के पारावार-
यही नियन्त्रित करते सृष्टि-
इनसे मिलती सात्विक दृष्टि।

पृथ्वी भी तो ग्रह है एक-
इसी तरह है यहाँ अनेक,
सब का अपना सदा स्वभाव-
डाल रहे सब स्वय प्रभाव।

कोई देते सुख-सौभाग्य-
कोई देते कुटिल कुभाग्य,
जिसकी जैसी होती चाल-
वैसी उसमें शक्ति कराल।

ज्योतिष की है यह पहचान-
बड़ा गहन है इनका ज्ञान,
भौतिकता से होकर छिन्न-
यह विद्या है सब से भिन्न।

जो भी इसका करते ध्यान-
उन्हें मिला है थोड़ा ज्ञान,
सागर-सा है यह अथाह-
बड़ी विकट है इसकी राह।

ऋषि-मुनियों का भारत देश-
इसमें थोड़ा किया प्रवेश,
योग-याग से तपे महान-
किया जिन्होंने जीवन दान।

वे ही कर पाए कुछ ज्ञात-
कैसे घटता सुभग प्रभात?
कैसे आती भू पर शाम-
गोचर ग्रह के क्या परिणाम।

नभ में ग्रह की अनगिन रेख-
कोई सका न सबको देख
सीमित से कुछ ज्योति-सरोज-
दृष्टि-पथ में दिखते रोज।

लेकिन इन से बड़े विशाल-
विस्तृत अगम व्योम का ताल,
कोई उनको सका न जान-
अभी अधूरा उनका ज्ञान।

लेकिन उनका प्रबल प्रभाव-
दिखता जीवन पर अनुभाव
अच्छे और बुरे का योग-
ग्रह-नक्षत्रों का सयोग।

इसको कोई सका न टाल–
यही उपस्थित है सब काल,
अच्छे ग्रह हैं मन के हर्ष–
लाते जीवन में उत्कर्ष–

किन्तु बुरों से कंपित सृष्टि–
चाह यही हो शमित–दृष्टि,
इनका करते सब उपचार–
जिससे सुखमय हो ससार।

अष्टम्

अपना यह ब्रह्माण्ड कि जिसमें-
अपनी धरती जगती
इसमें जाने कितनी ज्योतिष-
क्षण-क्षण शिखा सुलगती।

सब पिण्डों को कोई पूरा-
पूरा जान न पाया,
कुछ देखा औ' कुछ का सब ने-
कुछ अनुमान लगाया।

यह ब्रह्माण्ड चतुर्दिक अपने-
सूरज पर है आश्रित,
ग्रह-नक्षत्र समेकित उससे-
रहते नित परिचालित।

यह पृथ्वी भी अन्य ग्रहों सम-
है अस्तित्व बनाए,
तारे औ' नक्षत्र अनेकों-
इस कक्षा में आए।

एक साथ सब को लेकर ही-
पृथ्वी घूम रही है,
इस कक्षा में भी कितनी ही-
गगा-व्योम बही है।

यही सौर्य मण्डल है जिसमें-
यह भू स्वय अवस्थित,
इससे कितने और बड़े हैं-
महाशून्य में आश्रित।

उनको कोई भौतिक दृग से-
अब तक देख न पाया,
समाधिस्थ होकर नर ने ही-
कुछ अनुमान लगाया।

जितनों को नर देख सके हैं-
वे भी अद्‌भुत लगते,
इन्हें देख उस परम शक्ति के-
भाव हृदय में जगते।

श्रद्धा से सिर झुक जाता है-
नरता लघुता लिखती,
महाविशाल प्रकृति के पट पर-
सृष्टि बिन्दु भर दिखती।

हर ब्रह्माण्ड नियति के सम्मुख-
अपने सूर्य जगे हैं,
ग्रह-नक्षत्र अनेक कक्ष में-
अपने आप लगे हैं।

ग्रह-नक्षत्रों के सग प्रथ्वी-
अविरल घूम रही है
इस ब्रह्माण्ड निखिल में उसकी-
अविरल धूम रही है।

सूर्य गगन में स्थिर है उसकी-
परिक्रमा सब करते,
पृथ्वी और अनेकों तारे-
एक कक्ष में फिरते।

इनकी गति के घूर्णि वेग को-
समझ नहीं हम पाते,
देख रहे हैं दृग से केवल-
उनको आते-जाते।

उनके आने-जाने के क्रम-
में ही, ऋतुएँ आतीं,
कभी शीत औ' कभी ग्रीष्म की-
छटा हमें दिखलाती।

ऋतुओं के परिवर्त्तन के हैं-
वे ही जग में कारण,
इनसे भू का कण-कण करता-
नूतन पट अवधारण।

इनसे ही दिन ज्योतित होता-
धरती जगमग करती,
इनसे ही रजनी के तम में-
चुप्पी गहन उतरती।

इनसे ही ऊषा आती है–
फूल नए खिल जाते,
सध्या की झुटपुट में खोये–
राग स्वय मिल जाते।

ऋतुओं का परिवर्तन होता–
दिवस–रात्रि मुस्काती,
दिग् दिगन्त तक ज्ञान–विभा की–
सुरभि धरा पर आती।

दिन आता है रजनी आती–
तारे नभ में छाते,
मिलन विरह के गीत हृदय में–
जग कर ज्योति जगाते।

✦ ✦ ✦

नमन उसे हम करते हैं जो–
इन सबका निर्माता,
उसके चरण–कमल पर अगजग–
अपना शीश नवाता।।

नवम्

महाशून्य के नील निलय में-
ज्योतिष-पिण्ड पड़े हैं,
उनसे ही विकीर्ण विभा पर-
सबके नयन गड़े हैं।

ज्ञात सभी को जीवन भू का-
होता सदा प्रभावित,
उनकी गति की डोर गगन में-
होती कभी न बाधित।

ये ही हैं वे ग्रह जिनसे हम-
पथ निरुपित करते,
इनके शमन-शान्ति के पथ पर-
अपने पग हम धरते।

इनकी संख्या नौ कहलाती-
किन्तु सात का लेखा,
मुक्त गगन में ध्यान लगाकर-
संतों ने है देखा।

राहु-केतु दो ऐसे ग्रह हैं-
जिनको देख न पाते,
किन्तु धरा पर उनकी गति भी-
देख मनुज अकुलाते।

सात ग्रहों के पिण्ड गगन में-
रहते सब दिन गोचर
इन्हें देख निर्धारित करते-
जन-जन जीवन सत्वर।

किन्तु यहाँ अब राहु-केतु भी-
अपना भाव दिखाते,
उनके गोचर सब प्रभाव को-
पंडित सत्य बताते।

पश्चिम के देशों में इनमें-
तीन और जुड़ आए,
हर्षल, नेपच्युन, प्लेटो ग्रह को-
इनके साथ मिलाए।

लेकिन अब तक गहन रूप में-
किसने इनको जाना,
जिसने जो भी कहा, महज है-
कुछ अनुमान बताना।

भारत में इस गुह्य ज्ञान का-
रूप अनोखा निखरा,
यत्र-तत्र-सर्वत्र ज्योतिषी-
ज्ञान यहाँ है बिखरा।

भारत के भी सत-मनीषी-
इसको जान न पाए,
नवम् ग्रहों के आगे कोई-
और अधिक बतलाए।

चाहे गोचर में कुछ उनका-
दिखता कुछ सचारण,
उनके साथ अन्य राशियों-
का है क्या अवधारण।

या फिर कुछ प्रभाव ही उनका-
दृष्टि पटल पर आता,
जातक के जीवन पर कोई-
अनुभव ही दे जाता।

ऐसा कुछ जब हुआ नहीं तब-
कैसे कोई माने,
महाशून्य के अतल गर्त में-
पिण्ड कौन पहचाने।

मानव का यह जीवन जग में-
सचमुच कितना सीमित,
लघुता में नर किन्तु प्रकृति है-
अतुलित और असीमित।

सत बताते प्रभु की लीला-
कोई जान न पाता
उड़ने को नर खूब उड़ा पर-
थाह न कुछ भी पाता।

एक तरफ है अम्बर सूना–
एक तरफ रत्नाकर,
सब रहस्य के कुहरे का ही–
झाँक रहे हैं अन्तर।

लेकिन कोई अब तक पूरा–
इसको जान न पाया,
जिसने गहरी डुबकी मारी–
और अधिक भरमाया।

यही रहस्य अनामिल जग का–
मूक जहाँ पर वाणी,
शमन करे शका जन-जन की–
शक्ति-सृष्टि-कल्याणी।

जिसने ग्रह नक्षत्र बनाये–
उसको नमन करें हम,
उसके पावन पुण्य भाव से–
अपना हृदय भरें हम।

सभी ग्रहों में परम प्रतापी–
है अम्बर में दिनकर,
कई नाम से अभिजित होता–
यह आदित्य विभाकर।

कोई है मार्तण्ड बताता–
कोई कहता सविता,
अर्क-तरणि या दीप्त रश्मि कह–
कोई रचता कविता।

पृथ्वी और अनन्य ग्रहों के–
मध्य शून्य में रहकर,
सबको ही आलोकित करता–
दाह-ताप खुद सहकर।

महाशून्य ब्रह्माण्ड निखिल में–
सूर्य सबल बलशाली,
इसकी ज्योति-शिखा है भू को–
जीवन देनेवाली।

इससे हमने दिशा-काल का–
ज्ञान अभी तक जाना,
इसके कारण अपना जीवन–
मानव ने पहचाना।

सूर्य नहीं तो इस धरती पर-
कुछ भी नहीं मिलेगा,
अन्धकार के गहन गर्त में-
पत्ता नहीं हिलेगा।

इसके कारण ऊषा आती-
फूल धरा पर खिलते,
नव प्रकाश के मिलन द्वार पर-
स्नेहिल जीवन मिलते।

इसके कारण दिन जगता है-
आती है दोपहरी,
इसके कारण श्रम जगता है-
निद्रा आती गहरी।

इसके कारण शाम-सवेरे-
संधि-काल बन जाता,
इसके कारण जीवन-यापन-
कर्म शुभाशुभ आता।

रात-दिवस का भेद यही है-
यही प्रकाश तिमिर है
इसको चाहे जो भी कह लो-
यही दिनेश मिहिर है।

अन्तरिक्ष भूलोक दिशाएँ-
यही विभाजित करता,
स्वर्ग-नरक औ' गहन रसातल-
सूर्य-रश्मि नित भरता।

इसी ज्योति से सभी रूप-
सौन्दर्य धरा पर मिलते,
तोड़ तिमिर की गहन शिला को-
ज्योति-पुज से मिलते।

सकल भुवन ब्रह्माण्ड अखिल में-
शक्ति इसी की फैली,
जहाँ नहीं यह पहुँच सकी है-
छटा वहाँ की मैली।

इससे ही दावानल जगता-
वृक्ष राख हो जाते,
इससे ही फिर शक्ति प्राप्त कर-
भू पर अकुर आते।

वन-प्रदेश की छटा विहँसती-
आती नव हरियाली,
नयी विभा से फिर आलोकित-
होती सकल वनाली।

जठरानल है यही कि जिससे-
मानव जीवन पाता,
गिरता-पड़ता तन इससे ही-
सदा स्वस्थ बन जाता।

जो भी मनुज ग्रहण करता है-
उसमें शक्ति यही है,
इसकी एक किरण से सब दिन-
जाग्रत व्योम-मही है।

सागर में बड़वानल बनकर-
यही तरंग उठाता,
चट्टानों का हृदय चीरकर-
निर्झर रूप सजाता।

सूरज की इस महाशक्ति के-
आगे हम सब नत हैं,
ग्रह-नक्षत्र इसी के कारण-
शून्य परिधि में स्थित हैं।

एकादश

जिसने भू पर ज्योति बनायी–
दिया तिमिर का घेरा,
संधि और प्रत्यूष काल का–
होता जिससे फेरा।

वही अजेय दिवाकर हम सब-
उसकी महिमा गाएँ,
उसके ज्योतित पथ पर चलकर-
जीवन सफल बनाएँ।



दक्ष यक्ष की दो कन्याएँ-
कश्यप ऋषि से व्याही
एक अदिति औ' दिति दूसरी-
सृष्टि पथ की राही।

दिति से दैत्य हुए इस भू पर-
देव अदिति से जनमे,
सदा विरोधी भाव रहे थे-
इन दोनों के मन में।

सूर्य देव भी अदिति पुत्र हैं-
देवोपम अभिजाता,
सप्त अश्व के रथ पर चलते-
भू के भाग्य विधाता।

एक चक्र का रथ है इनका-
अरुण हाँकनेवाला,
पद-विहीन होकर हैं लाते-
धरती पर उजियाला।

रथ के प्रबल वेग के सम्मुख–
कोई ठहर न पाता,
दिग्-दिगन्त तक ताप लपट से–
भस्मीभूत हो जाता।

धरती बहुत दूर है जिससे–
अब तक शेष बची है,
दाह-पिन्ड से ऊर्जा लेकर–
उसने सृष्टि रची है।

ग्रह-नक्षत्रों के सँग पृथ्वी–
प्रतिपल चलती रहती,
सूर्य देव की परिक्रमा में–
क्षणभर नहीं ठहरती।

ताप उसी से मिलता पल-पल–
उससे ही गति मिलती,
शीत-ग्रस्त हिम-खण्डों से भी–
सरिता सुभग निकलती।

सूर्य देव की दो भार्याएँ–
सज्ञा औ' है छाया,
छाया से उत्पन्न शनिश्चर–
पुत्र रूप में आया।

इसीलिए तो शनि-ग्रह रहता-
सदा सूर्य अनुगामी,
उसको यह कुछ कष्ट न देता-
रवि है जिसका स्वामी।

सभी ग्रहों में बड़ा प्रबल है-
यह आदित्य दिवाकर,
इससे ही पोषित पुलकित है-
जड़-जगम-स्थावर।

काल-पुरुष का केन्द्र यही, तो-
आत्मा भी कहलाती,
अणु-अणु तक में शक्ति इसी की-
अपनी छटा दिखाती।

सभी ग्रहों में सूरज ही तो-
है सबसे बलशाली,
इसकी विमल दृष्टि है नर को-
सब कुछ देनेवाली।

चन्द्र-वृहस्पति मगल इसके-
सब दिन मित्र रहे हैं,
शुक्र और शनि रिपु विद्वेषी-
रह कर कष्ट सहे हैं।

जातक के जीवन पर इसका-
वड़ा प्रभाव पड़ा है,
कुटिल ग्रहों के घातों पर तो-
सब दिन स्वय अड़ा है।

माणिक धारण करनेवाला-
दिनकर का बल पाता,
यही रत्न है जो जातक के-
बल को और बढ़ाता।

पूषन् कृत पीड़ा तो इससे-
स्वय शमित हो जाती,
जातक के जीवन में त्रुटियाँ-
कभी न रहने पातीं।

प्रात उठकर सूर्य देव को-
जो जल अर्पण करता,
वह जातक अपने जीवन में-
कीर्त्ति-सुयश नित भरता।।

द्वादश

ग्रह–नक्षत्रों में शीतल है–
शान्त सभी से चन्द्र,
इसकी गति की प्रबल तीव्रता–
कभी न होती मन्द्र।

चन्द्र-सोम औ' तारापति हैं-
इसके नाम अशेष,
कोई इसे कलाधर कहता-
कोई शशि-राकेश।

सबसे तीव्र इसी की गति है-
कभी न रुकता वेग,
इससे उठते जातक मन में-
नए-नए सवेग।

अत्रि महर्षि के तप-दृग से-
ढुलके जो जल-विन्दु,
उसमें ब्रह्मा ने देखा था-
शक्ति-पुज का सिन्धु।

ब्रह्म-लोक ले जाकर उसको-
किया प्रदत्त स्वरूप,
प्रकट किया फिर उसको देकर-
एक तरुण का रूप।

नाम उसी का पड़ा चन्द्रमा-
औषधियों का कोष,
शमित इसी से होते जग में-
भौतिकता के दोष।

एक कथा है कर्दम ऋषि की-
पुत्र प्राप्त थे तीन,
दत्तात्रेय औ दुर्वासा के-
साथ चन्द्र आसीन।

इसीलिए हिमकर को कोई-
कहते हैं आत्रेय,
भव-भेषज उत्पत्ति में है-
चन्दा का ही श्रेय।

पृथ्वी का है निकट पड़ौसी-
सभी ग्रहों में चाँद,
इसीलिए मानव ने पहले-
वहीं लगायी फाँद।

सच है, इसमें कोई अपना-
रहता नहीं प्रकाश,
लेकिन सूरज की किरणों से-
मिलता इसे सुहास।

जिस दिन यह सूरज-पृथ्वी के-
पड़ता बीचोबीच,
सूर्य-ग्रहण तब लग जाता है-
अन्धकार को खींच।

लेकिन पृथ्वी जब होती है-
सूर्य-चन्द्र के मध्य,
चन्द्र-ग्रहण तब कहलाता है-
ज्योतिष का यह तथ्य।

सूर्य-विम्ब के कारण ही यह-
घटता-बढ़ता नित्य,
गहम अमा औ' पूर्ण कौमुदी-
इसके ही हैं कृत्य।

चन्द्र-लग्न के जातक होते-
कलाकार सम्भाव्य,
ऐसे ही जन कवि कहलाते-
रचते मधुरिम काव्य।

चन्दा को ही काल-पुरुष का-
कहते मन अभिजाता,
सुख-समृद्धि इसी से मिलती-
होता यश विख्यात।

इससे ही सागर की लहरें-
उठकर बनती ज्वार,
इसकी किरणों से मिलती है-
शीतल शान्ति अपार।

सूर्य और बुद्ध ग्रह हैं इसके-
नैसर्गिक से मित्र,
राहु-केतु हैं शत्रु, शुक्र-शनि-
मगल सामिक चित्र।

सूर्य और बुद्ध जब मिलते हैं-
हिमकर ग्रह के साथ,
पलक मारते कट जाती है-
घनी अन्धेरी रात।

यों तो चन्दा शुभ कारक है-
सदा मिटाता दोष,
अशुभ कर्म से अपने जातक-
को रखता निर्दोष।

किन्तु निशाकर कृत पीड़ा से-
बचने के सकेत,
ऐसे जातक धारण कर लें-
मोती उजला-श्वेत।

सभी ग्रहों में है मयक ही-
मन से शीतल-शान्त,
इसका जातक कभी न होता-
जीवन में उद्भ्रान्त।

इसीलिए चन्दा भी वंदित-
हैं धरती के देव,
ग्रहण करो सब पूजन-अर्चन
भू के ईश स्वमेव।।

त्रयोदश

मगल ग्रह की अन्य ग्रहों में-
 है पृथ्वी से समता,
दोनों की है एक सदृश ही-
 प्राकृत-भौतिक क्षमता।

जीवनदात्री वायु यहाँ है-
जल भी प्रचुर भरा है,
इसका वातावरण धरा के-
जैसा ही गहरा है।

इसीलिए कुछ कहते इस पर-
होंगे निश्चय प्राणी,
कुछ का मत है होंगे उस पर-
अधिक वली औ' ज्ञानी।

तरह-तरह की कथा-कहानी-
मगल से सबधित,
इस धरती के जीवन में भी-
होती रही प्रचारित।

उड़नशील तश्तरियाँ नभ में-
कभी पड़ीं दिखलाई,
कुछ कहते हैं मगल ग्रह से-
वे हैं भू पर आई।

कुछ का मत, मगलवासी हैं-
तीव्र बुद्धि के धारक,
उन्नत सस्कृति और सभ्यता-
के हैं वे अवधारक।

इसी तरह की विपुल कल्पना-
इसके साथ जुड़ी है,
भूतल के वैज्ञानिक जन की-
उस पर दृष्टि मुड़ी है।

इसका सबल प्रमाण अभी तक-
कोई देख न पाया,
इसीलिए इन तर्कों का-
परिणाम नहीं कुछ आया।

ज्योतिष मंगल को पृथ्वी का-
पुत्र सहज बतलाता,
दोनों के भू-तल की समता-
एक साथ दिखलाता।

ज्योतिष इसको काल-पुरुष का-
पराक्रम है कहता,
नरता का पुरुषार्थ इसी में-
अधिक सभी से रहता।

रक्त वर्ण औ वृषभ रूप में-
साहस ही यह प्रतिमा,
दृढ़ता से धारण करता है-
सकल सिद्धि औ गरिमा।

इसमें वल है, शौर्य अदम है-
कभी नहीं यह डरता,
खतरों के पथ पर ही अविरल-
अपने पग है धरता।

खून-खराबी करने वालों-
को करता उत्तेजित,
युद्ध-भूमि की ओर अहर्निश-
करता है उत्प्रेरित।

सूर्य-चन्द्र औ' वृहस्पति इसके-
मित्र भाव के रक्षक
राहु-केतु-बुध शत्रु-भाव में-
बनते इसके भक्षक।

शुक्र और शनि ग्रह रहते हैं-
समता के अभिलाषी,
एक साथ जब मिलते कटती-
नर की सकल उदासी।

झगड़े-झझट और मुकदमे-
में मगल का बल है
रक्त-पात तक इसके जातक-
जीवन का सबल है।

जहाँ कहीं भी क्रोध जगे तो-
समझो मगल जागा,
शुभ कर्मों की रेखाओं ने-
साथ अचानक त्यागा।

कुटिल कर्म में मगल का ही-
दिखता पौरुष केवल,
इसके कारण ही जीवन में-
होती रहती हलचल।

मगल-कृत पीड़ा की खातिर-
मूँगा धारण करते,
यही प्रवाल शुभकर बनकर-
ताप-शाप सब हरते।

शक्ति-बीज इस पौरुषमय का-
पूजन-अर्चन होता,
माँ काली के पद-पद्मों को-
आँसू से नर धोता।।

चतुर्दश

दूर गगन में चमक रहा जो-
दिवस-अंत की बेला,
कभी-कभी दिनमान उदय के-
पहले दिखा अकेला।

वही वुद्ध है, सभी ग्रहों में-
दिखता तेज प्रखर-सा,
सवसे छोटा, लेकिन गति में-
चलता ज्वार लहर-सा।

हिमकर-भार्या रोहिणि का ही-
पुत्र इसे सब कहते,
मनु की पुत्री ईला के सँग-
सब दिन यही विचरते।

ईला का था पुत्र पुरूरवा-
धर्म-बुद्धि का ज्ञाता,
अश्वमेघ के कारण भू पर-
अब तक जाना जाता।

उसने यज्ञ रचाकर भू पर-
धर्म-भाव फैलाया,
दुख से पीड़ित मानवता को-
सच्चा पथ दिखाया।

ग्रीक कथा है ग्रह-मण्डल के-
नृपति सूर्य के कारण,
स्वय वृहस्पति ने ही इसको-
किया सहज अवधारण।

सभी तरह की शक्ति-सुमति दे-
दौत्य-कर्म सिखलाया,
सुख आरोग्य पुनर्जीवन का-
दाता इसे बनाया।



सभी ग्रहों में तेजस्वी है-
सबका ही सुख दाता,
इसके सम्मुख पाप-ताप तो-
कभी नहीं टिक पाता।

इसके जातक सहज भाव से-
सुख-सौभाग्य बढ़ाते,
इसके आगे दोष किसी के-
कभी न टिकने पाते।

काल-पुरुष की वाणी इसको-
ज्योतिष-गण हैं कहते,
विद्या के औ' बुद्धि विमल के-
पुज यहीं पर रहते।

शुभ ग्रहों में बुद्ध की केवल-
सब दिन गणना होती,
इसके जातक के घर आ कर-
श्री-वृद्धि ही रहती।

इसके जातक वक्ता होते-
हास-व्यग के कामी,
मित्र-भाव से साथ सभी के-
रहते बनकर स्वामी।

बुद्धि-ज्ञान औ' प्रतिभा में यह-
सबसे होते आगे,
इसके कारण कितनों ने ही-
भौतिक सुख हैं त्यागे।

आत्म-तोष-हित मगल वर्द्धक-
ज्ञान इसी से मिलता,
इसके अर्चन-आराधन से-
मन का पकज खिलता।

हरे रग के बाल-रूप में-
यह ग्रह विचरण करता,
परम प्रसन्न वृत्ति से निर्भय-
चलता कभी न डरता।

सूर्य-शुक्र औ राहु-केतु हैं-
बुध के मित्र सनातन,
मगल-गुरु औ' शनि हैं इसकी-
समता के अनुगुजन।

चन्द्र-पुत्र है पर चदा से-
शत्रु-भाव यह रखता,
लेकिन चदा-मित्र-भाव से-
बुध को सदा परखता।

जातक का सौभाग्य सदा ही-
इससे वढ़ता आया,
सभी काल में इसके जातक-
का है मान वढ़ाया।

पाप-ग्रहों के मिलने पर तो-
पीड़ा निश्चय आती,
लेकिन मन में शक्ति उभर कर-
अपनी राह वनाती।

पन्ना है वह रत्न कि जिससे-
बुध-कृत सकट टलते,
वाधाओं के शिला खण्ड सब-
अपनेआप पिघलते।

पचदश

सभी देवता देव गुरू को-
सादर शीश नवाते,
उनकी इच्छा के अनुगामी-
होकर धन्य कहाते।

देवों पर जब असुर क्रोध की-
कठिन घड़ी थी आई,
वर्य वृहस्पति ने उठकर तब-
सच्ची राह दिखाई।

ज्ञान सुरों ने पाकर इन से-
विजय-केतु फहराया,
देव-लोक से असुर-गणों को-
था पाताल भगाया।

सभी ग्रहों में वृहस्पति केवल-
सब विद्या के ज्ञाता,
देव-गणों के सुभग शौर्य के-
ये ही हैं अभिज्ञाता।

देवासुर सग्राम हुआ तब-
ठिठक गए थे सुर-गण,
किन्तु अगिरस के कौशल से-
विजय मिली थी उस क्षण।

देवों के गुरू-पद पर इनकी-
होती सदा प्रतिष्ठा,
देवों के उत्कर्ष-भाव में-
इनकी रहती निष्ठा।

सभी ग्रहों में महाकाय हैं-
ये प्रशान्त अधिवेता,
इसका है आकार वृहद औ -
यही उर्ध्व-सचेता।

इसके जातक ज्ञान-शौर्य में-
सबसे आगे रहते,
किसी तरह की बौद्धिक विपदा-
कभी नहीं वे सहते।

सभी गुणों के धारक होते-
होते ज्ञान-प्रणेता
इसके कारण ही बनते हैं-
भव में सात्विक नेता।

पीत-गौर है वर्ण कि जिसमें-
अद्‌भुत आभा दिखती,
भूरे रंग के बाल शीश पर-
आँखें चम-चम लगती।

इनके उद्‌भव से मिटती है-
पाप-ग्रहों की रेखा,
कोई अब तक जान न पाया-
कैसा इनका लेखा।

कर्म शुभाशुभ की खातिर ही-
इनका वन्दन होता,
पापी ग्रह तो दृष्टि मात्र से-
अपना सब वल खोता।

अच्छे ग्रह तो बढ़ते रहते,
पापी खुद छिप जाते,
कुटिल ग्रहों के खेल साथ में
कभी न चलने पाते।

सूर्य-चद्र औ' मगल ग्रह तो-
मित्र-भाव में रहते,
शुक्र और बुध शत्रु-भाव में-
रहकर प्रतिपल दहते।

राहु-केतु-शनि इनसे मिलकर-
समता के पथ गहते,
इसके जातक समकक्षी से-
तिलभर दुख न सहते।

काल-पुरुष का ज्ञान यही है-
सब कौशल का ज्ञाता,
इसको कहते ज्ञान अखण्डित-
जीवन का सुखदाता।

उच्च लग्न में होकर इससे-
जातक पडित होता,
ज्ञानार्जन में होता है वह-
पूर्ण ज्ञान का स्रोता।

इसके जातक को जीवन में-
बौद्धिक कष्ट न मिलता,
ज्ञान-किरण से उनके मन का-
मनहर सरसिज खिलता।

फिर भी गुरु-कृत दोष शमन-हित-
सब पुखराज पहनते,
जिसके कारण कुटिल पथ पर-
चलते सभी मचलते।।

षष्ठदश

सभी ग्रहों में एक शुक्र ही–
लगता बड़ा सुहावन,
अतुल मनोरम, त्वरित तेजमय–
दर्शनीय मन–भावन।

भृगु ऋषि के हैं पुत्र-ज्ञानमय-
दैत्याचार्य प्रतिष्ठित,
वर्षाकारक इनकी गति है-
भू पर महिमा मंडित।

एक अक्ष सब विद्याओं के-
ये हैं ज्ञाता-धाकर,
दैत्यवंश के लिए समर्पित-
एक यही उद्धारक।

विष्णु देव जब वामन बनकर-
बलि को छलने आए,
शुक्राचार्य घुसे झारी में-
अपना बदन छिपाए।

झारी की टोंटी में बैठे-
जल के मुँह को बाँधे,
रुके सकल संकल्प-कार्य औ-
कपट न वामन साधे।

विष्णु इसे पहचान गए फिर-
उद्यम एक निकाला,
झारी के उस सजल छिद्र में-
झटपट कुश दे डाला।

एक आँख तो फूट गई वे-
बचा न उसको पाए,
दैत्याचार्य इसी से जग में-
एक अक्ष कहलाए।

एक अक्ष होकर दैत्यों का-
करते हैं उत्कर्षण,
सभी तरह से दैत्य-गणों को-
देते हैं सरक्षण।

सभी ग्रहों में मात्र शुक्र ही-
रुप मधुर झलकाता,
ऊषा औ' सध्या वेला में-
यदा-कदा दिख जाता।

कभी-कभी दोपहरी में भी-
बीच गगन में दिखता,
मानो कोई कलाकार कुछ-
शून्य-पटल पर लिखता।

काल-पुरुष का काम यही है-
कामाग्नि सुलगाता,
इसके जातक के अन्तर में-
काम सदा अकुलाता।

प्रकृति-पुरुष की जहाँ कहीं भी-
होती मधुरिम क्रीड़ा,
वहाँ न रहने पाती पलभर-
किसी तरह की ब्रीडा।

खुलकर होती पूर्त्ति काम की-
केवल इसके कारण,
पशु-पक्षी तक करते इससे-
कामेच्छा अवधारण।



राहु-केतु-शनि-बुध से मिलकर-
मित्र-भाव ही रखता,
सूर्य-चन्द्र हैं शत्रु-सरीखे-
ध्यान न इन पर धरता।

मगल-गुरु हैं एक भाव में-
समता के अभ्यासी,
इसके जातक प्रेम-कुशल हैं-
जन-जन के विश्वासी।

उनके मन में प्रेम-भाव की-
लहर हिलोरें लेती,
नयी कल्पना उभर-उभर कर-
जीवन में रस देती।

इसके जातक के जीवन में-
सदा प्रेम लहराता,
प्रेम-तत्त्व को छोड़ कहीं भी-
उसका ध्यान न जाता।

इसके जातक कवि होते हैं-
प्रेमिल कविता रचते,
उसके उर में प्रेम-भाव ही-
खुलकर सदा विचरते।

कष्ट न उनको होता, वे ही-
करते हैं मनमानी,
खिली कौमुदी के आँगन में-
गढ़ते नयी कहानी।

किन्तु कदाचित कहीं शुक्र कृत-
यदि आए कुछ पीरा,
इन्हें निवारण हेतु करें वे-
तत्क्षण धारण हीरा।।

सप्तदश

सभी ग्रहों का धरती पर नित-
होता है गुण-गान,
किन्तु विशेष सदा रहता है-
शनि पर सबका ध्यान।

इसके कारण महाराज भी–
बन जाते हैं रक,
और भिखारी बन जाते हैं–
तत्क्षण नृपति-मयक।

इसका प्रबल प्रभाव सभी को–
निश्चय होता ज्ञात,
इसके जातक रहते जग में–
सब दिन ही विख्यात।

रवि-भार्या छाया का सुत है–
अपने ही बलवान,
व्याप रही है अग-जग तक में–
इसकी कीर्त्ति महान।

इसकी 'ढैया हर जातक को–
रहती सब दिन याद,
'साढे साती में सब करते–
रक्षा की फरियाद।

सदा शनिश्चर चलता अपने–
तीन वलय के साथ,
घेरे वे ही रहते जैसे–
किरणों के जलजात।

जिस पर हुआ प्रसन्न उसे तो-
करता मालोमाल,
और कुपित जो हुआ समझलो-
आया उसका काल।

लोहा-सीसा-महिष-तैल औ -
काला-काला रग,
बड़े प्यार से रखता है यह-
सब दिन अपने सग।

इसीलिए इसके जातक भी-
करते उससे प्यार,
इन तत्त्वों से ही तो शनि का-
होता है उपचार।

अनायास जातक को मिलता-
शनि के फल का भोग,
नहीं कल्पना रहती जिसकी-
आता वह सयोग।

कभी-कभी सुनने में आता-
कोई गिरा धड़ाम,
जहाँ न कोई अन्य तत्त्व हैं-
समझो शनि का काम।

इसके कारण राज सिहासन-
पाता दीन-फकीर,
इसके कारण सम्राटों की-
फुटती है तकदीर।

सबसे ऊँचा यही विठाता-
इसका यही कमाल,
और रसातल तक ले जाता-
शनि ही बनकर काल।

काल-पुरुष का दु:ख यही है-
ग्रह-मण्डल का राग,
इसके कटु अनुभव की पीड़ा-
सका न कोई त्याग।

कष्ट और सब आधि-व्याधि का-
कारण इसका योग,
यही बढ़ाया करता तन में-
तरह-तरह के रोग।

किन्तु शनिश्चर जाते-जाते-
करता है कल्याण,
दुख के तप से तपा मनुज को-
देता सात्विक ज्ञान।

शुक्र और बुध मित्र-भाव हैं-
गुरु है समता-भाव,
सूर्य-चन्द्र औ' मगल ग्रह के-
होते शत्रु-प्रभाव।

शनि-कृत पीड़ा शमन हेतु है-
नीलम श्यामल रत्न,
इसे पहन कष्टों से बचने-
का करते सब यत्न।

गाँव-गाँव में शनि की पूजा-
करते अक्सर लोग,
हँसी-खुशी बरसे इस जग में-
भागे भव के रोग।।

अष्टदश

दानव कुल में जन्मा राहू-
ग्रह है बड़ा अनोखा,
कदम-कदम पर इसका जातक-
खाता रहता धोखा।

हिरण्यकशिपु की सुता सिंहिका-
राहू की थी माता,
चचल-मन राहू है जग में-
सबका ही दुख दाता।



सागर-मथन से निकला था-
जब अमृत का कलसा,
देवों की पंक्ति में बैठा-
राहू दुष्ट चपल-सा।

सूर्य-चन्द्र ने देख लिया, इस-
कपटी को पहचाना,
विष्णु देव के पास पहुँच कर-
पड़ा इन्हें बतलाना।

लेकिन तब तक अमृत इसने-
कर ही पान लिया था,
विष्णु ने फिर चक्र चला, सिर-
धड़ से अलग किया था।

अमृत कारण मृत्यु न आई-
अब भी है यह जीवित,
राहू है सिर, और वपुष है-
केतु नाम से मंडित।

सूर्य-चन्द्र ने देखा औ –
विश्वम्भर को बतलाया,
इसीलिए राहू ने उनको–
अपना शत्रु बनाया।

सूर्य-चन्द्र को राहू अक्सर–
अपना ग्रास बनाता,
जिसको अग-जग सूर्य-ग्रहण औ'–
चन्द्र-ग्रहण बतलाता।

राहू इतना दुष्ट कि अब तक–
अपना द्वेष दिखाता,
रवि-शशि को ग्रसने का कोई–
अवसर चूक न पाता।

इसके कारण तरह-तरह की–
कई व्याधियाँ आती,
पाप-ग्रहों में राहू की ही–
सबको शक्ति सताती।

ग्रह-मण्डल में इसका लेकिन–
कोई मान नहीं है,
इसके अविरल सचारण पर–
कुछ भी ध्यान नहीं है।

लेकिन यह ग्रह जातक-हित है-
सभी तरह बलशाली,
इसीलिए इसके गणना की-
अब है चली प्रणाली।

कोई कहते कलयुग में तो-
स्पष्ट प्रभाव दिखाता,
छाया-ग्रह होकर भी रिपु को-
कभी नहीं भटकाता।

काल-पुरुष का दुख कहलाता-
पीड़ा देनेवाला,
नील वर्ण यह बिना पाँव के-
सदा विचरनेवाला।

शुक्र-राहु औ बुध हैं उसके-
साथी और सहायक
सूर्य-चन्द्र औ मंगल उसके-
शत्रु-पक्ष भय दायक।

दीर्घ-सूत्र आलस्य भरा यह-
मंद चाल से चलता
गुरु रहता सम भाव उसे जब-
उसका संबल मिलता।

राहू के जातक को हरदम-
कष्ट सताया करता,
फिर भी खतरों से भिड़ने में-
वह नर कभी न डरता।

शक्ति शुभाशुभ राहू की तो-
तुरत दिखाई पड़ती,
इसके कारण बिना समय के-
पत्ती तरू से झड़ती।

इसका भी उपचार हृदय से-
करते ध्यान लगाकर,
इसके जातक मानव को-
गोमेद-रत्न पहना कर।

इसी रत्न से राहू-कृत सब-
दोष शमित हो जाता,
हारा-थका पथिक-सा जातक-
अपनी श्रान्ति मिटाता।।

नवदश

ग्रह-मण्डल में राहु का धड़-
केतु जिसे सब कहते,
घूम रहा है अविरल जिसको-
जन-जन देख सिहरते।

यों तो सौर्य-पथ पर इसको-
स्थान नहीं मिल पाया,
फिर भी एक कक्ष पर इसने-
है अधिकार जमाया।

कृष्ण वर्ण काजल-सा इसका-
रूप भयकर काला,
पाप-ग्रहों में वड़ा तीक्ष्ण है-
दुख वरसाने वाला।

धूर्म-सदृश यह कारागृह का-
दुर्घटना का स्वामी,
कुष्ठ-रोग औ' मृत्यु-योग का-
रहता प्रतिक्षण कामी।

इसके जातक अद्‌भुत-अद्‌भुत-
स्वप्न देखते रहते,
क्षुधा-जनित पीड़ाओं का भी-
भार हृदय पर सहते।

पाप-ग्रहों में प्रमुख यही है-
कष्ट सभी को देता,
इसका जातक कभी न हँसकर-
साँस चैन की लेता।

लेकिन कुछ कहते हैं यह ग्रह-
मोक्ष प्रदायक बनता,
तपकर इससे अन्त क्षणों में-
सात्विक भाव उभरता।

राहू का अर्द्धांग यही है-
इसीलिए कुछ कहते,
इसमें राहू जैसे ही सब-
भाव दिखाई पड़ते।

यों तो है यह मलिन तमोमुख-
अशुभ क्षणों का दायक,
लेकिन शुभ ग्रहों के सँग यह-
होता बड़ा सहायक।

शुभ ग्रहों के मिल जाने पर-
पाप ताप कट जाते,
जिससे जातक शुभ-कर्मों में-
अपना हृदय लगाते।

मानव के तलवों पर अपना-
यह अधिकार जमाता,
जिससे जातक भटक-भटक कर-
अपना समय गँवाता।

ठोस कार्य की निर्मिति में यह-
ध्यान न लगने देता,
आलस से अभिभूत मनुज को-
कभी न जगने देता।

सब दिन कुछ षड्यन्त्र रचाने-
में ही बुद्धि लगाता,
पाप-कर्म में उद्यत रहने-
का ही भाव जगाता।

सभी ग्रहों सम इसके भी हैं-
शत्रु-मित्र कुछ अपने,
उदासीन सम-भाव-विलासी-
ग्रह भी रहते कितने।

सूर्य-चन्द्र औ' मगल ग्रह हैं-
मित्र-भाव में रहते,
शुक्र और शनि शत्रु-भाव में-
रहकर पीड़ा सहते।

सभी ग्रहों में बुध-गुरू केवल-
समता के उद्घोषक,
यही सदा आपस में बनते-
प्रेम-तत्त्व के पोषक।

इससे ये कुछ वैर न रखते-
चक्कर साथ लगाते,
अपने और सहायक ग्रह से-
बल-सम्बल है पाते।

केतु-दोष से बचने को-
वैडूर्य बताया जाता,
यही रत्न लहसुनिया है जो-
दोष शमित कर पाता।।

विश

विस्तृत यह आकाश कि जिसमें-
अनगिन तारे चमक रहे,
ग्रह-नक्षत्र-दिवाकर कितने-
ज्योति-पिण्ड हैं दमक रहे।

इसका कुछ अनुमान न लगता-
इसे कल्पनातीत कहें,
सूर्य-चन्द्र-ग्रह-धूमकेतु-भू-
निराधार सब घूम रहे।

कितना विस्तृत शून्य गगन है-
लगती इसकी थाह नहीं,
ऐसे-ऐसे ज्योति-पिण्ड हैं-
जाती जहाँ निगाह नहीं।

जिस पृथ्वी के हम प्राणी हैं-
उसके चारों ओर यहाँ,
फैला जो ब्रह्माण्ड उसी का-
चलता हर क्षण जोर यहाँ।

कैसा है आकर्षण किस में-
कोई जान न पाया है,
नेति-नेति कहकर ही सबने-
अपना भरम मिटाया है।

यह ब्रह्माण्ड बहुत छोटा है-
उससे कितने बड़े-बड़े,
महाशून्य में जाने कितनी-
दूरी पर हैं अड़े-अड़े।

उनको कोई देख न पाता-
थाह न उनकी लग पाई,
सृष्टि-नियता की लीला पर-
बुद्धि सभी की भरमाई।

यहाँ सौर्य-मण्डल जो छोटा-
पास हमारे दिखता है,
वह भी महा अनन्त कथा ही-
प्रकृति पटल पर लिखता है।

फिर भी उसकी थोड़ी-सी ही-
सीमा हम पहचान सके,
ज्योति-पिण्ड जो अनगिन फैले-
थोड़ा-थोड़ा जान सके।

सूर्य गगन में जो दिखता है-
'सौर जगत' कहलाता है,
पृथ्वी-तारा-चन्दा जैसा-
पिण्ड ज्योति का आता है।

इन पिण्डों में पृथ्वी-तल पर-
जिनका तनिक प्रभाव पड़ा,
ज्योतिष-विद्या में उनका ही-
मिलता केवल ज्ञान-जड़ा।

जो भी ग्रह दिखते हैं उनकी-
बात सभी बतलाते हैं,
ऐसे ही ग्रह दृष्टि-पटल पर-
प्रतिदिन आते जाते हैं।

सूर्य हमारा स्थिर है, लेकिन-
पृथ्वी घूमा करती है,
रात-दिवस औ' ऋतु की जिससे-
रेखा सदा उभरती है।

तारे जो सचरणशील हैं-
वे ही ग्रह कहलाते हैं,
पृथ्वी-तल पर ये ही अपना-
मुख्य प्रभाव दिखाते हैं।

इनसे भिन्न गगन में तारों-
के हैं कई समूह वहाँ,
ये ही हैं नक्षत्र, शून्य में-
दिखते किन्तु दुरुह यहाँ।

नभ-मण्डल में दूरी-मापक-
ये ही हैं स्तम्भ बड़े,
तारों की आकृति पर इनके-
अलग-अलग हैं नाम पड़े।

मुख्य रूप से सत्ताइस की-
सख्या सब बतलाते हैं,
शीत-ग्रीम औ वर्षा-सूचक-
यही सभी कहलाते हैं।

द्वादश राशि गगन में जो हैं-
तारों के हैं ढेर घने,
ये सब मिल-जुल कर ही भू पर-
ज्योतिष के हैं ज्ञान बने।



कौन कहे यह प्रकृति-नटी है-
कितना अगम-अथाह-वड़ी,
किसी वस्तु का छोर वहीं है-
सीमा अतुल-अनन्त खड़ी।

बार-बार सिर झुक जाता है-
प्रभु लीला का पार नहीं,
कौन शून्य की थाह लगाए-
अपना जब ससार नहीं।।

एकविंश

अखिल विश्व ब्रह्माण्ड बनाकर-
जो संचालित करता है,
सृष्टि-दृष्टि के हर तत्त्वों को-
जो परिपालित करता है।

सबसे पहले उसी शक्ति के-
आगे शीश झुकाते हैं,
उसकी छवि पर ध्यान लगाकर-
उसकी ही जय गाते हैं।

ग्रह-नक्षत्रों का भूतल पर-
पड़ता रहा प्रभाव सदा,
उनके कारण ही जगते हैं-
मन में भाव-कुभाव सदा।

अच्छे ग्रह के फल अच्छे ही-
भू पर देखे जाते हैं,
और बुरे ग्रह व्यक्ति-व्यक्ति के-
मन में पाप जगाते हैं।

यह भी सच है कोई भी ग्रह-
बुरा नहीं कहलाता है,
पापी-ग्रह भी अपने जातक-
का अच्छा कर जाता है।

शत्रु-भाव से ग्रह जब मिलते-
तभी अशुभ फल देते है,
और नहीं तो जातक का सब-
कष्ट स्वय हर लेते हैं।

देश-राष्ट्र पर भी ग्रह की-
दृष्टि शुभाशुभ सदा पड़ी,
जिसके कारण घटती रहती-
दुर्घटनाएँ बड़ी-बड़ी।



आज हमारे जीवन-क्रम में-
जो परिवर्त्तन आया है,
उसका भी है श्रेय ग्रहों को-
यह दिन जो दिखलाया है।

कहीं किसी को चैन नहीं है-
आपाधापी फैली है,
कोई चादर स्वच्छ न लगती-
सबकी धूमिल मैली है।

मार-काट औ हिंसा के ही-
सभी जगह हैं जोर बढ़े,
लुच्चे और लफगों के दल-
भू पर चारों ओर बढे।

सच्चे औ इमानदार तो-
यदा कदा दिख पड़ते हैं,
मगल-स्वर इस भरत भूमि पर-
नहीं सुनाई पड़ते हैं।

कुर्सी पाने की है सब में-
आज भयानक होड़ लगी,
'क्षण में मालामाल बनें' हम-
सब में है यह चाह जगी।

मानवता खो गयी कहीं भी-
है चरित्र की बात नहीं,
ऐसा घोर अन्धेरा छाया-
दिखता निकट प्रभात नहीं।

स्वार्थ परायण सत्ताधारी-
अपनी ही बस कहते हैं,
जनता सड़कों पर रोती वे-
शीश महल में रहते हैं।

घर-घर धुआँ रुदन का उठता-
चूल्हे में है आग नहीं,
सत्ता में है एक न ऐसा-
जिस पर अनगिन दाग नहीं।

साधु-पुरुष तो सिसक रहे हैं-
गुण्डे मोद मनाते हैं,
लुटती लाज बचाने को फिर-
क्यों नहीं आगे आते हैं।

अवला कोई कहीं निरापद-
घर से निकल न पाती है,
पीड़ित नरता दानवता के-
पद पर पड़ी सिसकती है।

धन-सग्रह करने की लिप्सा-
सबके मन आकाश चढ़ी,
पाप-वृत्ति जन-जन में जगकर-
अमर बेलि-सी आज बढ़ी।

जाने कैसे ग्रह-निवेश हैं-
जिनसे ऐसा हाल हुआ,
जाने कैसा पाप-योग है-
जिससे जग बेहाल हुआ।

वही धरा है वही व्योम है-
पर जगता शुभ राग नहीं,
भाई-भाई के अन्तर में-
क्योंकर कुछ अनुराग नहीं।

  

जगन्नियन्ता उतरो भू पर-
मानव का उद्‌धार करो,
डूब रहा है देश भँवर में-
इसका बेड़ा पार करो।

चक्र सुदर्शन धर कर आओ-
दुष्टों का सहार करो,
मानवता हो पुन प्रतिष्ठित-
ऐसा ग्रह सचार करो।

देखो नरता के नयनों में-
कैसी पीड़ा झाँक रही,
दुष्ट दनुजता काँटों से ही-
छलनी छाती टाँक रही।

कहीं नहीं है शान्ति धरा पर-
तड़प रहे हैं लोग सभी,
आज जुटे हैं महानाश के-
भूतल पर सयोग सभी।

अन्धकार के महागर्त में-
ज्योति जगाओ विश्म्भर,
उतरो झट कैलाश-शिखर से-
करुणा-कर औढ़र शकर।

डम्-डम् गूँजे डमरू भू पर-
मगल ध्वनि के गीत जगे,
व्यक्ति-व्यक्ति के अन्तर-तर में-
सात्विकता की प्रीत जगे।